EDUZONE: International Peer Reviewed/Refereed Multidisciplinary Journal (EIPRMJ), ISSN: 2319-5045
Volume 3, Issue 2, July-December, 2014, Available online at: www.eduzonejournal.com

मध्यकालीन एवं आधुनिक काल में रचित हिंदी कविता की विविद्य की जानकारी

डॉ रामसजन पाण्डेय

परिचय

भारत के मध्यकालीन युग में उत्कृष्ट विशिष्टताओं से युक्त भक्ति साहित्य की एक समृद्ध परंपरा विकसित हई। भारतीय मध्यकाल का सबसे महत्वपूर्ण विकास भक्ति साहित्य वस्तुतः एक प्रेम काव्य है जिसके अंतर्गत दम्पत्तियों अथवा प्रेमियों अथवा सेवक और स्वामी अथवा माता-पिता और सन्तान के मध्य के प्रेम को चित्रित किया गया है। भक्ति आंदोलन में धर्म के प्रति काव्यात्मक दृष्टिकोण और काव्य के प्रति वैराग्य पूर्ण दृष्टिकोण अपनाया गया था।

रचनाकार सामाजिक संवेदनशीलता के साथ व्यवस्था के विरुद्ध संघर्षरत होता है और इस दृष्टि से वह बहुसंख्यक समाज का प्रतिनिधि होता है। वह समाज का प्रतिनिधि पहले होता है, रचनाकार बाद में। बात यदि कविता की हो तो इस संदर्भ में वेणुगोपाल जी के लेख का उद्धरण यहाँ महत्वपूर्ण हो जाता है : “अगर कविता एक सामाजिक कार्य है (जो कि वह है) तो फिर उसका राजनीतिक , सामाजिक, आर्थिक, परिस्थितियों से जुड़ना अनिवार्य ही है। कवि इसलिए प्रभावित होता है और प्रतिक्रिया करता है। कविता उसकी प्रतिक्रिया का एक हिस्सा होती है। मूल्य एवं रचना के अंतर्संबंधों पर बात करें तो यह कहना उचित होगा कि रचनाकार अपने युग और समाज का साक्षी एवं भोक्ता उसी प्रकार होता है, जैसे आम आदमी। अनुभव, मूल्य- निर्माण एवं रचना की निर्मिति — दोनों की प्रक्रियाओं से संबद्ध होता है। मूल्य एवं रचना के सृजन में रचनाकार के परिवेश की भी आधारभूत भूमिका होती है। साहित्य के अंतर्गत सभी विधाएँ भिन्न- भिन्न युगों में अपनी स्थापनाएँ बदलती रहती हैं। यह इस बात का प्रमाण भी है कि समाज में नवीन मूल्यों की उद्भावना की अपनी अनिवार्यता है। रचनाकार सामाजिक संवेदनशीलता के साथ व्यवस्था के विरुद्ध संघर्षरत होता है और इस दृष्टि से वह बहुसंख्यक समाज का प्रतिनिधि होता है।

नवशिक्षितों के संसर्ग से उपाध्यायजी ने लोक-संग्रह का भाव अधिक ग्रहण किया है। उक्त काव्य में श्रीकृष्ण ब्रज में रक्षक-नेता के रूप में अंकित किए गए हैं। खड़ी बोली में इतना बड़ा काव्य, अभी तक नहीं निकला है। बड़ी भारी विशेषता इस काव्य की यह है कि-यह सारा संस्कृत के वर्णवृत्तों में हैं जिसमें अधिक परिमाण में रचना करना कठिन काम है। उपाध्यायजी का संस्कृत पद-विन्यास अनेक उपसर्गों से लदा तथा 'मंजु', 'मंजुल', 'पेशल' आदि से बीच बीच में जटित अर्थात् चुना हुआ होता है। द्विवेदीजी और उनके अनुयायी कवि-वर्ग की रचनाओं से उपाध्याय जी की रचना इस बात में साफ अलग दिखाई पड़ती है। उपाध्यायजी कोमलकांत पदावली को कविता का सब कुछ नहीं तो बहुत कुछ समझते हैं। यद्यपि द्विवेदीजी अपने अनुयायियों के सहित जब इस संस्कृतवृत्त के मार्गपर बहुत दूर तक चल चुके थे, तब उपाध्यायजी उसपर आए, पर वे बिल्कुल अपने ढंग पर चले। किसी प्रकार की रचना को हद पर-चाहे उस हद तक जाना अधिकतर लोगों को इष्ट न हो-पहुँचाकर दिखाने की प्रवृत्ति के अनुसार उपाध्यायजी ने अपने इस काव्य में कई जगह संस्कृत शब्दों की ऐसी लंबी लड़ी बाँधी है कि हिंदी को 'है', 'था', 'किया', 'दिया' ऐसी दो-एक क्रियाओं के भीतर ही सिमटकर रह जाना पड़ा है। पर सर्वत्र यह बात नहीं है। अधिकतर पदों में बड़े ढंग से हिंदी अपनी चाल पर चल चलती दिखाई पड़ती है।

1850 आधुनिक काल से हिंदी साहित्य के इस युग में कई बदलाव हुए. भारत में राष्ट्रीयता और स्वंतंत्रता संग्राम का उदय हुआ. आजादी की लड़ाई, ladi और जीती गयी. जन संचार के विभिन्न साधनों का विकास हुआ, रेडिओ, टी वी व समाचार पत्र हर घर का हिस्सा बने और शिक्षा हर व्यक्ति का मौलिक अधिकार। छापेखाने का आविष्कार हुआ.यातायात के साधन आम आदमी के जीवन का हिस्सा बने.

भारतेंदु हरिश्चंद्र (के) युग की कविता (1850-1900)

ईस्वी सन 1850 से 1900 तक की कविताओं पर भारतेंदु हरिश्चंद्र का गहरा प्रभाव पड़ा है। उन्हें ही आधुनिक हिंदी साहित्य का पितामह कहा गया हैं। भारतेन्दु ने भाषा को एक सुगम रूप देने का प्रयास किया . इनके काव्य-साहित्य में प्राचीन एवं नवीन का मेल देखने को मिलता है. भक्तिकालीन, रीतिकालीन परंपराएं इनके काव्य में देखी जा सकती हैं तो आधुनिक नूतन विचार और भाव भी इनकी कविताओं में पाए जाते हैं। इन्होने भक्ति-प्रधान, श्रृंगार-प्रधान, देश-प्रेम-प्रधान तथा सामाजिक-समस्या-प्रधान कविताएं की हैं।

भारतेन्दु हरिश्चंद्र ब्रजभाषा से खड़ीबोली की ओर हिंदी-कविता को ले जाने का प्रयास किया। इनके युग में अन्य कई महानुभाव ऐसे हैं जिन्होंने विविध प्रकार हिंदी साहित्य को समृध्द किया। इस काल के प्रमुख कवि हैं-

- भार्तेन्दु हरिश्चन्द्र
- प्रताप नारायण मिश्र
- बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन'
- राधाचरण गोस्वामी
- अम्बिका दत्त व्यास

पं महावीर प्रसाद द्विवेदी (के) युग की कविता (1900-1920)
सन 1900 के बाद दो दशकों पर पं महावीर प्रसाद द्विवेदी प्रभाव स्पस्टता से देखा जा सकता है । इसीलिए इस युग को द्विवेदी-युग कहते हैं। 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक के रूप में वे उस समय पूरे हिंदी साहित्य पर छाए रहे। उनकी प्रेरणा से ब्रज-भाषा हिंदी कविता से हटती गई और खड़ी बोली ने उसका स्थान ले लिया।

भाषा को स्थिर, परिष्कृत एवं व्याकरण-सम्मत बनाने में पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी ने बहुत परिश्रम किया। कविता की दृष्टि से वह इतिवृत्तात्मक युग था। आदर्शवाद का बोलबाला रहा। भारत का उज्ज्वल अतीत, देश-भक्ति, सामाजिक सुधार, स्वभाषा-प्रेम आदि कविता के मुख्य विषय थे। नीतिवादी विचारधारा के कारण श्रृंगार का वर्णन मर्यादित हो गया।

कथा-काव्य का विकास इस युग की विशेषता है। भाषा खुरदरी और सरल रही। मधुरता एवं सरलता के गुण अभी खड़ी-बोली में आ नहीं पाए थे। सर्वश्री मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी आदि इस युग के यशस्वी कवि हैं। जगन्नाथदास 'रत्नाकर' ने इसी युग में ब्रज भाषा में सरस रचनाएं प्रस्तुत कीं। इस युग के प्रमुख कवि-

- अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'
- रामचरित उपध्याय
- जगन्नाथ दास रत्नाकर
- गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही'
- श्रीधर पाठक
- राम नरेश त्रिपाठी
- मैथिलीशरण गुप्त
- लोचन प्रसाद पाण्डेय
- सियारामशरण गुप्त

छायावादी युग की कविता (1920-1936)
सन 1920 के दौर में हिंदी में कल्पनापूर्ण स्वछंद और भावुक कविताओं की एक बाढ़ आई। यह यूरोप के रोमांटिसिज़्म से प्रभावित थी। भाव, शैली, छंद, अलंकार सब दृष्टियों से यह नवीन था। भारत की राजनीतिक स्वतंत्रता के बाद लोकप्रिय हुई इस कविता को आलोचकों ने छायावादी युग का नाम दिया। छायावादी कवियों की उस समय भारी कटु आलोचना हुई परंतु आज यह निर्विवाद तथ्य है कि आधुनिक हिंदी कविता की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि इसी समय के कवियों द्वारा हुई। जयशंकर प्रसाद, निराला, सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा इस युग के प्रधान कवि के रूप में जाने जाते हैं.

उत्तर-छायावाद युग-(1936-1943)
यह काल भारतीय राजनीति में भारी उथल-पुथल का काल रहा है। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय, कई विचारधाराओं और आन्दोलनों का प्रभाव इस काल की कविता पर पड़ा. द्वितीय विश्वयुद्ध के भयावह परिणामों के प्रभाव से भी इस काल की कविता बहुत हद तक प्रभावित है। निष्कर्षत:राष्ट्रवादी, गांधीवादी, विप्लववादी, प्रगतिवादी, यथार्थवादी, हालावादी आदि विविध प्रकार की कवितायें इस काल में लिखी गई। इस काल के प्रमुख कवि हैं--

- माखनलाल चतुर्वेदी
- बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'
- सुभद्रा कुमारी चौहान
- रामधारी सिंह 'दिनकर'
- हरिवंश राय 'बच्चन'
- भगवतीचरण वर्मा
- नरेन्द्र शर्मा
- रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'
- शिवमंगल सिंह 'सुमन'
- नागार्जुन
- केदारनाथ अग्रवाल
- त्रिलोचन
- रांगेयराघव

प्रगतिवादी युग की कविता (1936)
छायावादी काव्य बुद्धिजीवियों के मध्य ही रहा। जन-जन की वाणी यह नहीं बन सका। सामाजिक एवं राजनैतिक आंदोलनों का सीधा प्रभाव इस युग की कविता पर सामान्यतः नहीं पड़ा। संसार में समाजवादी विचारधारा तेज़ी से फैल रही थी। सर्वहारा वर्ग के शोषण के विरुध्द जनमत तैयार होने लगा। इसकी प्रतिच्छाया हिंदी कविता पर भी पड़ी और हिंदी साहित्य के प्रगतिवादी युग का जन्म हुआ। 1930 क़े बाद की हिंदी कविता ऐसी प्रगतिशील विचारधारा से प्रभावित है।

1936 में "प्रगतिशील लेखक संघ" के गठन के साथ हिन्दी साहित्य में मार्क्सवादी विचारधारा से प्रेरित प्रगतिवादी आन्दोलन की शुरुआत हुई .इसका सबसे अधिक दूरगामी प्रभाव हिन्दी आलोचना पर पड़ा।मार्क्सवादी आलोचकों ने हिन्दी साहित्य के समूचे इतिहास को वर्ग-संघर्ष के दृष्टिकोण से पुनर्मूल्यांकन करने का प्रयास आरंभ किया। प्रगतिवादी कवियों मे नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल और त्रिलोचन के साथ नयी कविता के कवि मुक्तिबोध और शमशेर को भी रक्खा जाता है।

प्रयोगवाद-नयी कविता युग की कविता 1943-1960)
दूसरे विश्वयुध्द के पश्चात संसार भर में घोर निराशा तथा अवसाद की लहर फैल गई। साहित्य पर भी इसका प्रभाव पड़ा। 'अज्ञेय' के संपादन में 1943 में 'तार सप्तक' का प्रकाशन हुआ। तब से हिंदी कविता में प्रयोगवादी युग का जन्म हुआ ऐसी मान्यता है। इसी का विकसित रूप नयी कविता कहलाता है। दुर्बोधता, निराशा, कुंठा, वैयक्तिकता, छंदहीनता के आक्षेप इस कविता पर भी किए गए हैं। वास्तव में नयी कविता नयी रुचि का प्रतिबिंब है। इस धारा के मुख्य कवि हैं-

- अज्ञेय,
- गिरिजाकुमार माथुर,
- प्रभाकर माचवे,
- भारतभूषण अग्रवाल,
- मुक्तिबोध,
- शमशेर बहादुर सिंह,
- धर्मवीर भारती,
- नरेश मेहता,
- रघुवीर सहाय,
- जगदीश गुप्त,
- सर्वेश्वर दयाल सक्सेना,
- कुंवर नारायण,
- केदार नाथ सिंह।

कालांतर में कई सम-विसम परिस्तिथियों व घटनाओ से प्रभावित होते हुए आधुनिक हिंदी खड़ी बोली कविता ने भी अल्प समय में उपलब्धि के उच्च शिखर प्राप्त किया. क्या प्रबंध काव्य, क्या मुक्तक काव्य, दोनों में हिंदी कविता ने सुंदर रचनाएं प्राप्त की हैं। गीति-काव्य के क्षेत्र में भी कई सुंदर रचनाएं हिंदी को मिली हैं। आकार और प्रकार का वैविध्य बरबस हमारा ध्यान आकर्षित करता है। संगीत-रूपक, गीत-नाटय वगैरह क्षेत्रों में भी प्रशंसनीय कार्य हुआ है। कविता के बाह्य एवं अंतरंग रूपों में युगानुरूप जो नये-नये प्रयोग नित्य-प्रति होते रहते हैं, वे हिंदी कविता की जीवनी-शक्ति एवं स्फूर्ति के परिचायक हैं।

आधुनिक हिन्दी

- **1796** - देवनागरी रचनाओं की शुरुआती छपाई।
- **1826** - "उदन्त मार्तण्ड" हिन्दी का पहला साप्ताहिक।
- **1837** - ओम् जय जगदीश के रचयिता श्रद्धाराम फुल्लौरी का जन्म।
- **1868** - राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' का लिपि सम्बन्धी प्रतिवेदन — फारसी लिपि के स्थान पर नागरी लिपि और हिन्दी भाषा के लिए पहला प्रयास राजा शिवप्रसाद का उनके लिपि सम्बन्धी प्रतिवेदन *कोर्ट कैरेक्टर इन द अपर प्रोविन्स ऑफ़ इण्डिया* से आरम्भ हुआ।
- **1877** - अयोध्या प्रसाद खत्री का हिन्दी व्याकरण, (बिहार बन्धु प्रेस)
- **1881** - वर्ष 1881 ई. तक आते–आते उत्तर प्रदेश के पड़ोसी प्रान्तों बिहार, मध्य प्रदेश में नागरी लिपि और हिन्दी प्रयोग की सरकारी आज्ञा जारी हो गई तो उत्तर प्रदेश में नागरी आन्दोलन को बड़ा नैतिक प्रोत्साहन मिला।
- **1893** - काशी नागरीप्रचारिणी सभा की स्थापना
- **1 मई 1910** - नागरी प्रचारिणी सभा के तत्वावधान में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थापना हुई।
- **1950** - हिन्दी भारत की राजभाषा के रूप में स्थापित।
- **10-14 जनवरी 1975** - नागपुर में प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित
- **दिसम्बर, 1993** - मॉरीशस में चतुर्थ विश्व हिन्दी सम्मेलन तथा उसके बाद विश्व हिन्दी सचिवालय की स्थापना
- **1997** - वर्धा में महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय की स्थापना का अधिनियम संसद द्वारा पारित
- **2000** - आधुनिक हिन्दी का अनतरराष्ट्रीय विकास

भक्ति काव्य के अतिरिक्त, मध्ययुगीन साहित्य में अन्य धाराएँ भी प्रचलित थीं जैसे कि पंजाबी में प्रेम गाथागीत (जैसे- वारिस शाह द्वारा रचित हीर-रांझा) और वीरगाथाएँ (जिन्हें 'क़िस्सा' के रूप में जाना जाता है)। 1700 और 1800 ईस्वी के मध्य बिहारी लाल और केशव दास जैसे कई कवियों ने हिन्दी में शृंगार (शृंगारिक भावना) के पंथनिरपेक्ष काव्य का सृजन किया। साथ ही बड़ी संख्या में अन्य कवियों ने उच्च कोटि के काव्य

की सम्पूर्ण शृंखला की रचना की है। तथापि, 1000 से 1800 ईस्वी के बीच मध्यकालीन भारतीय साहित्य की सर्वाधिक शक्तिशाली धारा भक्ति काव्य ही है जिसकी रचना देश की लगभग सभी प्रमुख भाषाओं में की गयी है।

मध्यकालीन भारतीय मन को समझने के लिए उन भाषाओं का अध्ययन करना आवश्यक है जो अभिव्यक्ति के जीवित माध्यम थे, और उनमें हिंदुस्तानी, ब्रज और अवधी को उदाहरण के लिए लिया जा सकता है। तीनों का आपस में गहरा संबंध है, लेकिन पहली दो एक ही माँ की बेटियाँ हैं। इन भाषाओं का विकास न केवल पिछले इतिहास के दृष्टिकोण से, बल्कि कुछ समस्याओं की समझ के लिए भी एक गहरा दिलचस्प अध्ययन है। आर्थिक दुरवस्था ने अनेक अमानवीय कृत्यों को जन्म दिया। किसान- मज़दूर अपने बच्चे बेचने लगे। स्वामी रामानंद, कबीर एवं अन्य संतों तथा भक्तों के काव्य में देशवासियों के प्रति तत्कालीन पीड़ा उभर कर आई है। अबुल फज़ल ने अकाल का ज़िक्र किया है : "अकबर के समय का अकाल इतना भीषण था कि लोगों ने एक-दूसरे का भक्षण करना शुरू कर दिया था तथा नगर के मार्ग तथा गलियाँ लाशों से पट गई थीं। गोस्वामी तुलसीदास ने भी इस दयनीय स्थिति का उल्लेख किया है। इरफ़ान हबीब ने निष्पक्ष भाव से लिखा, "जनता को जोतने के लिए ज़मीन मिलती थी लेकिन पेट भरने के लिए अन्न उपलब्ध नहीं हो पाता था।" मध्यकाल में हिंदू या तो युद्ध में मारे गए या दास बनाए गए। विजेताओं / आक्रमणकारियों से कन्या की रक्षा के लिए 'बाल विवाह ' की प्रथा शुरू हुई। जौहर के नाम पर अमानवीय 'सती प्रथा' का सूत्रपात हुआ जिसमें मृत पति के साथ जीवित पत्नी आग की लपटों के हवाले की जाती थी और पुरोहित उसकी स्वर्ग-यात्रा का स्वांग रचते न थकते थे । सती प्रथा को धर्म का चोला पहनाया गया और विधवा विवाह को निकृष्ट माना गया। श्रमिक शूद्र और अछूत की श्रेणी में पहुँचाए गए, जिन्हें न शिक्षा का अधिकार था, न मंदिर में प्रवेश करने का। ताराचंद ने 'सोसाइटी एंड स्टेट इन मुग़ल पीरियड' में विस्तार से लिखा है। प्रेमशंकर ने लिखा है : "कई बार भक्ति चेतना के माध्यम से निम्न वर्ग को धार्मिक आधार देने की चेष्टा की गई, पर बार-बार नेतृत्व उच्च वर्ग हथिया लेता था। ब्राह्मण उसे सैद्धांतिक रूप दे रहे थे। उसे क्षत्रियों का प्रश्रय तथा वैश्यों का आर्थिक समर्थन प्राप्त था। मध्यकाल ने स्त्री से उसकी सोच छीन ली थी। समय के प्रवाह, पुरुष समाज के प्रभुत्व, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक कारकों के कारण महज उपादान बनी स्त्री।"

ये सभी आर्य वंश के हैं - आर्य भाषण की संतान, जो मध्य एशिया के प्रवासियों द्वारा भारत में लाया गया था और जो विभिन्न चरणों से गुज़रने के बाद, छठी शताब्दी ईस्वी में अपभ्रंश के रूप में अंत में उभरा - वह शताब्दी जिसने देखा हर्ष द्वारा प्रतिनिधित्व की जाने वाली राजनीति के प्रकार का पतन और राजपूत राज्यों का उदय। जाहिर तौर पर पुराने साहित्यिक प्राकृत अब रूढ़ हो गए थे और बोली जाने वाली बोलियों से दूर हो गए थे, जो लगातार बदल रही थीं। अपभ्रंश बोली जाने वाली माध्यमिक प्राकृत के साहित्यिक चरण को दर्शाता है जो छठी शताब्दी से सामने आया था।

सल्तनत काल में हिन्दी का पूर्ण विकास नहीं हुआ, यद्यपि यह धीरे-धीरे मध्य भारत में रहने वाले लोगों की भाषा बन रही थी। भक्ति आंदोलन के प्रसार के साथ यह भाषा बहुत फली-फूली। गोरखनाथ, नामदेव, कबीर आदि संतों ने भजन, पद (हिंदी छंद) की रचना की।

ऐसा कहा जाता है कि कबीर ने अकेले ही लगभग बीस हज़ार कविताएँ लिखी हैं । उनकी रचनाओं में अपनी एक ताक़त और आकर्षण है, जो हिंदुओं और मुसलमानों के बीच एकता की भावना पैदा करने में काफ़ी मदद करता है। उनके साहित्य ने हिन्दी को लोकप्रिय बनाने में काफ़ी मदद की। सिख धर्म के संस्थापक गुरु नानक ने भी हिंदी साहित्य के लिए बहुत बड़ी सेवा की। मध्यकालीन युगप्रवर्तक कवियों ने वर्गीय समाज की व्यक्तिवादिता का लगातार विरोध किया और लोकहित के विचारों को अपने काव्य में प्राथमिकता दी। भक्ति का सामाजीकरण : भक्तिकाव्यों में कवियों की विचारधारा बौद्धिक एवं लौकिक जगत के प्रति सचेत रही। इन कृतियों में मनुष्य की संवेदनात्मक अनुभूतियों को विकास का पूर्ण अवसर मिला है। इस काल के सभी प्रमुख कवि सामाजिक विचारक के रूप में उभरे। भक्ति के अंतर्गत उन्होंने मनुष्य की संकीर्ण भावनाओं को परिष्कृत करके उनकी चेतना को विस्तार दिया। पूर्व मध्यकालीन काव्य की सहजता : पूर्व मध्यकालीन काव्य मनुष्य की सहज और स्वाभाविक मन: स्थितियों का काव्य है जो स्वार्थ और अहंकार को व्यक्तित्व- विकास का बाधक मानता है : "कबीर कहाँ गरबिये इस जोवन की आस। टेसू फूले दिवस चारी, खंखर भए पलास।।" तत्कालीन मुनि- तपस्वियों के प्रति तुलसीदास की व्यंग्योक्ति : "नारि मुई गृह संपति नासी। मूड़ मुड़ाय भये संन्यासी।।" कवि रहीम ने कहा है : " जो बड़ेन को लघु कहे, नहिं रहीम घटि जाहिं। गिरिधर मुरलीधर कहे, कछु दुख मानत नाहिं।।" इन कवियों ने साधना को माध्यम बेहतर संसार की कामना की है, जहाँ मानवमात्र में समानता हो और जीवमात्र में कोई क्लेश न हो।

प्रत्येक प्राकृत में अपभ्रंश था या नहीं, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है। मार्कंडेय जैसे व्याकरणियों से संकेत मिलता है कि ऐसा ही था। लेकिन उनमें से केवल दो या तीन ही महत्वपूर्ण थे, उनमें से सबसे प्रसिद्ध नागर थे। इसके शायद दो रूप थे, एक पश्चिमी और दूसरा पूर्वी। हालाँकि, पश्चिमी अपभ्रंश का उपयोग साहित्यिक उद्देश्यों के लिए अधिक व्यापक रूप से किया गया था। पश्चिम में अपभ्रंश साहित्य काफ़ी प्रचुर मात्रा में है, क्योंकि जैनियों ने इसका उपयोग धार्मिक पुस्तकों को लिखने के लिए किया था, जिनमें हरिभद्र की समराइच्छा कहा, धनवाला की भाविस्ता कहा, पुष्पदंत की जसहर चारि, सवायधम्मदोह आदि का उल्लेख किया जा सकता है।

पूर्व में, सिद्धों के संप्रदाय ने अपने धार्मिक ग्रंथों के लिए अपभ्रंश का इस्तेमाल किया। उदाहरण दोहा कोश और चर्यपद हैं, जिनमें सराह, कान्हा और अन्य की रचनाएँ हैं। १२वीं शताब्दी में हेमा चंद्र, १६वीं शताब्दी में त्रिविक्रम और १७वीं में मार्कंडेय जैसे व्याकरणियों ने इसके नियम निर्धारित किए, और पिछले लेखकों के दृष्टांत छंदों को लिया।

जिसे आमतौर पर हिंदू कहा जाता है, वह वास्तव में पूर्व में मैथिली से लेकर पश्चिम में राजस्थानी तक कई भाषाएँ हैं। हिंदी में पहला प्रमुख काम लाहौर के चंद बरदाई द्वारा 12 वीं शताब्दी की महाकाव्य कविता पृथ्वीराज रासौ है, जो इस्लामी आक्रमणों से पहले दिल्ली के अंतिम हिंदू राजा पृथ्वीराज के कारनामों का बखान करती है। अवधी बोली में लिखने वाले फारसी कवि अमीर खोसरो की कविता भी उल्लेखनीय है।

हिंदी में अधिकांश साहित्य प्रेरणा में धार्मिक है; उदाहरण के लिए, १५वीं सदी के अंत और १६वीं सदी की शुरुआत में, सुधारवादी कबीर ने मज़बूत लघु कविताएँ लिखीं जिनमें उन्होंने इस्लाम और हिंदू धर्म में सामंजस्य स्थापित करने की कोशिश की।

अवधी या पूरबी हिंदी, जो एक संभावित पूर्वी अपभ्रंश के माध्यम से अर्ध मगधी प्राकृत वंश की है प्रारम्भ में उतनी लोकप्रिय नहीं थी जैनों ने अर्ध मगधी को अपनी धार्मिक पुस्तकों में नियोजित किया था, लेकिन जैन अर्ध मगधी का आधुनिक अवधी से संबंध स्पष्ट नहीं है। सिद्धों की रचनाओं की भाषा एक पूर्वी बोली है जिसका दावा कुछ लोगों ने पुरानी पूर्वी हिंदी और अन्य द्वारा बंगाली के रूप में किया है। १५वीं शताब्दी में, जब प्राचीन अवध के पूर्वी जिले शर्की वंश की स्थापना के परिणामस्वरूप नई गतिविधि में उभरे, अवधी को एक नया प्रोत्साहन मिला।

कबीर ने संभवत: इसी बोली में अपनी बानी की रचना की थी। कबीर की भाषा पर कुछ संदेह इस तथ्य के कारण डाला गया है कि नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित उनकी मुद्रित रचनाएँ, जिसे संपादक ने १६वीं शताब्दी की पांडुलिपि माना है, मिश्रित पूरबी, पंजाबी और राजस्थानी है। दूसरी ओर, सिखों के आदिग्रंथ में समाहित कबीर की कविताएँ, १७वीं शताब्दी के प्रारंभ का एक संकलन, लगभग अमिश्रित अवधी में हैं।

कबीर 15वीं शताब्दी में रहते थे। उनके कई अनुयायी थे जो उनकी मूल बोली का इस्तेमाल करते थे। लेकिन यहाँ सूफ़ी कवियों का एक स्कूल भी पैदा हुआ जिसने अवधी को रोज़गार दिया। इनमें कुतुब प्रथम था। उन्होंने 1501 में मृगवती नामक एक कविता लिखी, जो चंद्रनगर के राजकुमार और कंचनपुर की राजकुमारी मृगवती के प्रेम की कहानी है। इसी संप्रदाय के और भी कवि थे, लेकिन उनमें मलिक मुहम्मद जायसी सबसे प्रसिद्ध हैं। उन्होंने प्रसिद्ध कविता पद्मावत की रचना 1540 ई.

उनमें से सबसे महान सूरदास थे, जिनके पद (गीत) एक भक्त की अपने प्रिय देवता के प्रति गहरी भावनाओं को सबसे पर्याप्त अभिव्यक्ति देने के रूप में पहचाने जाते हैं। सूरदास के साथ, ब्रज ने गीत और कविता के लिए एक उपयुक्त माध्यम के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त की। इसकी मिठास ने उत्तर भारत को इतना मंत्रमुग्ध कर दिया कि यह पूरे उत्तर में साहित्य की भाषा के रूप में फैल गया। ब्रज का आधिपत्य 19वीं शताब्दी तक चला। केवल पिछले 50 वर्षों के दौरान इसे धीरे-धीरे आधुनिक हिंदी द्वारा विस्थापित किया गया है। पूर्व मध्यकालीन काव्यों में एक ओर निर्गुणपंथी सूफ़ी संत कवि-कवयित्रियों ने ईश-प्रेम की गंगा बहाई तो दूसरी ओर कृष्णभक्त कवि-कवयित्रियों ने शाश्वत प्रेम की प्रतिष्ठा की। उनका प्रेम लौकिक होते हुए भी अध्यात्म से सना था। कबीर ने क़दम-क़दम पर धर्माडंबर का विरोध किया और सूर ने प्रेमहीन शुष्क भाववादी ज्ञान की आलोचना गोपियों से कराई : "ऊधौ जोग सिखावन आए। सृंगी भस्म अघोरी मुद्रा, दे ब्रजनाथ पठाए॥" मीरा कहती है : "अविनासी सूँ बालमा है, जिनसू साँची प्रीत। मीरा कूँ प्रभु मिला है, एही जगत की रीत॥" सहजोंबाई प्रेम में ही जीवन की सार्थकता देखती है : "प्रेम दिवाने जो भये , मन भयो चकनाचूर। छकै रहै घूमत रहै, सहजो देख हुज़ूर॥" दयाबाई प्रेम की पीड़ा अभिव्यक्त करने में मीराबाई के समीप नज़र आती हैं : "पंच प्रेम को अटपटो कोइय न जानत बीर। कै मन जानत आपनौ कै लागी जेहि पीर।।" यह पद ,मीरा के पद "घायल की गति घायल जाने की जिन घायल होय" की याद दिला देता है, जबकि एक निर्गुण तो दूसरी सगुण ईश की आराधिका है। मालिक मुहम्मद जायसी तो प्रेम के अनूठे चितेरे कवि ही माने गए हैं : मुहम्मद चिनगी प्रेम के सुनि महि गगन डेराइ। धनि बिरही औ धनि हिया, तह अस अगिनि समाइ॥" धार्मिक कर्मकांडों का विरोध : सामंत- विरोधी शक्तियों का जन्म जाति – वर्णगत ढाँचे के गर्भ से हुआ था।

हिंदुस्तानी, पश्चिमी हिंदी की उत्तरी बोली, जिसे ब्रज से अलग करने के लिए खड़ी बोली नाम दिया गया; अमीर खुसरो द्वारा रेखता और हिंदवी कहा जाता है; दक्षिणी और उत्तरी वक्ताओं द्वारा दखिनी और उर्दू, उन अस्पष्ट बोलियों में से एक है, जो प्राचीन मध्य भूमि, संस्कृत का घर, विकसित हुई थी। सौरसेनी प्राकृत, नगर या सौरसेनी अपभ्रंश, इसके पूर्ववर्ती थे। इसकी ध्वन्यात्मक और रूपात्मक प्रणालियाँ माध्यमिक प्राकृत से ली गई थीं। लेकिन जबकि यह अभी भी एक बोली जाने वाली बोली थी, यह फारसी और अरबी बोलने वाले लोगों के प्रभाव में आ गई। इसने उनसे नई ध्वनियाँ प्राप्त कीं, और एक व्यापक ध्वन्यात्मक प्रणाली विकसित की। नई ध्वनियों के साथ, तुर्की, फारसी और अरबी मूल के कई नए शब्द इसकी शब्दावली में प्रवेश कर गए। जहां तक इसके व्याकरण का संबंध था, इसमें बहुत कम संशोधन हुआ था, हालाँकि वाक्याँशों की संरचना और शब्दों और यौगिकों की व्युत्पत्ति के तरीकों में कुछ हद तक बदलाव किया गया था, और मामूली व्याकरणिक रूपों और उपयोगों को फारसी से अपनाया गया था।

इसके विपरीत, दूसरी अवधि की कविता में विचारों के एक अलग समूह का प्रभुत्व है। हिन्दी आलोचकों की शब्दावली में इसे रीति काव्य, रस और अलंकार की कविता के नाम से जाना जाता है। यह पूरी तरह से कृत्रिम रचना है। इसकी मुख्य रुचि शृंगार (प्रेम) है; और इसका मुख्य उद्देश्य, भाषण के आँकड़ों की क़िस्मों का उदाहरण। इसका प्रेम मानव जुनून नहीं है जो किसी व्यक्ति विशेष पुरुष या महिला के दिल को हिलाता है, न ही वह भावना जो हमें यहाँ और अभी के अत्याचार से ऊपर उठाती है, बल्कि एक मनोवैज्ञानिक, वर्गीकृत, काव्य है ।

आधुनिक काल

आज हमारे समाज में विषमता और विकृतियाँ अपने चरम पर है। एक ओर अर्थव्यवस्था की निर्भरता ने अमीर–ग़रीब,संपन्न–दरिद्र वर्ग की खाई को पाटने का काम किया,वही इन दोनों छोरों पर जनमानस में विकृतियों ने अपना डेरा बनाना प्रारंभ किया। संवेदनशून्य बन रहे मनुष्य को फिर से चेताने का काम साहित्य कर रहा है। संपूर्ण विश्व नाना असंतोषों की विध्वंसक छाया से घिरा हुआ हैं। ऐसे में भावी विनाश को रोकने के साथ मन-मस्तिष्क को पुनः मूल्यों की ओर मोड़ने में साहित्य उपयुक्त माध्यम सिद्ध हो सकता है। वास्तव में मूल्य ऐसे तत्व है,जो जीवन को परिमार्जित करते है। समकालीन कवि अपनी लेखनी द्वारा अवमूल्यन की स्थिति पर तीव्र आघात करना चाहता है।

इक्कीसवीं सदी वैश्वीकरण व भूमंडलीकरण की है। सम्पूर्ण विश्व एक घर बन गया है। वैश्वीकरण के इस युग में निजीकरण एवं उदारीकरण को बढ़ावा दिया जा रहा है, जिससे मानवाधिकारों का हनन विविध रूपों में सामने आ रहा है। विश्व में उदारीकरण, वैश्वीकरण एवं बाज़ारवाद के माध्यम से अधिक से अधिक आर्थिक विकास के प्रयास किये जा रहे हैं। सांस्कृतिक मूल्यों के विघटन व परिवर्तन के कारण परिस्थितियाँ विषम होती जा रही है। अधिकारों की आड़ में मानव-मूल्यों का ह्रास हो रहा है। अर्थप्रधान संस्कृति में मानव मशीनी-सा जीवन जी रहा हैं। जिसके सामने संवेदना, सहयोग व सद्भावना कमज़ोर पड़ रही है। यह अँधेरा ईर्ष्या, द्वेष, जलन, घुटन, कुण्ठा, पीड़ा के धुएँ का है। प्रसिद्ध साहित्यकार एवं कवि धर्मवीर भारती, भवानी प्रसाद मिश्र, प्रसाद, पंत, निराला, नागार्जुन, रघुवीर सहाय, निर्मल वर्मा, रामदरश मिश्र, केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन, कुँवर नारायण, शमशेर बहादुर सिंह, ऋतुराज, चन्द्रकांत देवताले, नरेश मेहता, विजयदेव नारायण साही जैसे अनेक साहित्यकारों ने अपनी क़लम से मानव-मूल्यों का संरक्षण करते हुए, उग्र स्वरों में काव्य सृजना की हैं। रामदरश मिश्र मानव-मूल्यों की पुनर्स्थापना मानवहृदय में कर मानवाधिकारों के सरंक्षण की दिशा दी है।

लय, एकरसता, एकता, समग्रता के पक्ष में काव्य के तत्व सभी विधाओं में प्रवेश कर सकते हैं। लेकिन चूँकि उत्तर आधुनिक कविता संकर, चयनात्मक, विषम, विषम, स्वतंत्र, बहु-सार्थक, गहन, गैर-रैखिक, लोकप्रिय, अंतःविषय है, इसमें कविता का पारंपरिक रूप, संरचना और कथा शामिल नहीं हो सकती है। इन दोनों धाराओं के बीच अंतर करना कठिन होने का कारण यह है कि इन दोनों धाराओं में समान प्रवृत्तियों की केवल मात्रात्मक असमानता है। इसे केवल इस तथ्य के आधार पर समझाया जा सकता है कि प्रवृत्ति प्राथमिक या द्वितीयक होती है। यह कहा जा सकता है कि समकालीन कविता, भारत में कविता को उत्तर आधुनिक के रूप में वर्गीकृत करने के सैद्धांतिक विवाद के बावजूद, काफ़ी हद तक और अनिवार्य रूप से है: आख्यान हैं। और विचलन इसका प्रतिनिधि स्वर है। कथा तत्व अब कविता की छवि के साथ जुड़ गया है और इसलिए उनका रूप मूर्त हो जाता है, अमूर्त नहीं। लेकिन खुलापन, ख़ालीपन, असंगति, अराजकता, बहुलतावादी सौन्दर्य और वृत्ति, इन कविताओं में कथा और सरलता की पुरानी शृंखला नहीं मिलती। इसलिए आवरण स्तर पर कविता सरल लगती है। आधुनिक पाठक, जिन्हें सिद्धांत रूप में जटिलता का अभ्यासी माना जाता है,सही मायने में, लेकिन कविता इतनी ढकी हुई है, होनी चाहिए।

उत्तर आधुनिकतावाद के एक विश्लेषक ब्रायन मैकहेल का कहना है कि कुछ मामलों में कविता उत्तर आधुनिकता के आगमन से पहले उत्तर आधुनिक थी या हमेशा उत्तर आधुनिक थी, और कुछ मामलों में कविता कभी भी आधुनिक नहीं रही है। इसके बजाय, ब्रायन मैकहेल ने आधुनिक कथा और उत्तर आधुनिक कथा के बीच के अंतर को समझाया। आधुनिक कथा ज्ञानमीमांसीय प्रश्न पूछती है – हम क्या जानते हैं या हम कैसे जानते हैं? ये प्रश्न ज्ञान की पर्याप्तता और विश्वसनीयता दोनों पर आधारित हैं। उत्तर आधुनिक कथाएँ, हालाँकि, ज्ञान और ज्ञान के बारे में नहीं हैं, बल्कि भविष्य के बारे में हैं, और आधिकारिक पूछताछ हैं – यह दुनिया कैसी है या इस दुनिया में क्या किया जाना चाहिए, आदि। ये सत्तावादी अन्वेषण पुरानी अस्तित्ववादी धारणाओं के बराबर हैं, इसलिए हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि उत्तर आधुनिकतावाद हमेशा अस्तित्ववाद द्वारा खोजे गए अस्तित्ववाद के प्रति शत्रुतापूर्ण रहा है।

भारतेंदु जी ने जिस प्रकार हिंदी गद्य की भाषा का परिष्कार किया, उस प्रकार काव्य की ब्रजभाषा का भी। उन्होंने देखा कि बहुत से शब्द जिन्हें बोलचाल से उठे कई सौ वर्ष हो गए थे, कवित्तों के सवैयों में बराबर लाए जाते हैं। इसके कारण कविता जनसाधारण की भाषा से दूर पड़ती जाती है। बहुत से शब्द तो प्राकृत-और अपभ्रंश काल की परंपरा के स्मारक के रूप में ही बने हुए थे। 'चक्कव', 'भुवाल', 'ठायो', 'दीह', 'ऊनो', 'लोय', आदि के कारण बहुत से लोग ब्रजभाषा की कविता से किनारा खींचने लगे थे। दूसरा दोष जो बढ़ते-बढ़ते बहुत बुरी हद को पहुँच गया था, वह शब्दों को तोड़ मरोड़ और गढ़ंत के शब्दों का प्रयोग था। भारतेंदुजी ने कविसमाज भी स्थापित किए थे जिनमें समस्यापूर्तियाँ बराबर हुआ करती थीं। दूर-दूर से कवि लोग आकर उसमें सम्मिलित हुआ करते थे। पंडित अंबिकादत्त व्यास ने अपनी प्रतिभा का चमत्कार पहले-पहल ऐसे ही कवि-समाज के बीच समस्यापूर्ति करके दिखाया था। भारतेंदुजी के शृंगार-रस के कवित्त सवैए बड़े ही सरस और मर्मस्पर्शी होते थे। "पिय प्यारे तिहारे निहारे बिना दुखिया अँखियाँ नहिं मानति है", "मरेहू पै आँखे ये खुली ही रहि जायँगी" आदि उक्तियों का रसिक-समाज में बड़ा आदर रहा। उनके शृंगाररस के कवित्त-सवैयों का संग्रह "प्रेममाधुरी" में मिलेगा। कवित्त-सवैयों से बहुत अधिक भक्ति और शृंगार के पद और गाने उन्होंने बनाए जो "प्रेमफुलवारी", "प्रेममालिका", "प्रेमप्रलाप" आदि पुस्तकों में संगृहीत हैं। उनकी अधिकतर कविता कृष्णभक्त कवियों के अनुकरण पर रचे पदों के रूप में ही है।

हिंदी साहित्य के आधुनिक काल का द्वितीय चरण द्विवेदी युग या जागरण सुधार काल के नाम से जाना जाता है।द्विवेदी युग का नामकरण आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम पर किया गया है। इसका कालक्रम 1903–1918 ई. रहा। उन्नीसवीं शती के अंत तक भारतेन्दुकालीन समस्यापूर्ति व नीरस तुकबंदियों से लोग विमुख होने लगे तथा लम्बे समय से काव्य की भाषा रही ब्रज का आकर्षण भी अब लुप्त होने लगा और उसका स्थान खड़ी बोली हिन्दी ने ले लिया। आचार्य शुक्ल इस काल को हिंदी काव्य की नई धारा कहते हैं। नई धारा से अभिप्राय रीतिकालीन शृंगारिक, प्रवृतियों,अभिव्यंजना, रूढ़ियों, एवं संस्कृत काव्यशास्त्र के अनुकरण पर आधारित रीतिबद्ध शास्त्रीय रचना को छोड़कर नयी अभिव्यक्ति और नयी अभिव्यंजना शैली के ग्रहण से है। द्विवेदी युग के अन्य महत्वपूर्ण कवि– राय देवीप्रसाद पूर्ण, रामचरित उपाध्याय, गयाप्रसाद शुक्ल सनेही, माखनलाल चतुर्वेदी, सियाराम शरण गुप्त, बालकृष्ण शर्मा नवीन, जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद, सोहनलाल द्विवेदी, श्यामनारायण पाण्डेय, मुकुटधर पाण्डेय, सत्यनारायण कविरत्न आदि हैं।

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध से एवं बीसवीं सदी के शुरुआती दौर में स्त्री-लेखन को सहेजने की कोशिश भी प्रारम्भ हो चुकी थी। स्त्री-मुक्ति, स्त्री-शिक्षा व अन्य बहुतेरे स्त्री-प्रश्नों के प्रति गंभीरता, स्त्री-जागरण के प्रति प्रबल समर्थन का भाव; नवजागरण के अधिकांशत: पुरुष एवं स्त्री उन्नायकों के विचारों के केंद्र में था, जिसपर नवजागरण-कालीन चेतना की स्पष्ट छाप थी। हिंदी पट्टी में इस दौर में स्त्री-रचनात्मकता की भी एक उल्लेखनीय स्वर महसूस की जाने लगी थी। इस दौर की स्त्री-रचनाकारों द्वारा गद्य-लेखन सह पद्य-लेखन की कड़ी में एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण नाम जो हिंदी के साहित्यिक पटल पर उभरकर आता है